

विक्रम संवत्-२०३६, श्रावण सुद्ध-१, सोमवार, ता. ११-८-१९८०
पयनामृत-३२, ३४, ३६. प्रपचन नं. ४

सम्यग्दृष्टिको आत्माके सिवा बाहर कहीं अरु नही लगता, जगतकी कोई वस्तु सुंदर नही लगती. जिसे चैतन्यकी महिमा ओं रस लगा है उसको बाह्य विषयोंका रस दूट गया है, कोई पदार्थ सुंदर या अरु नही लगता. अनादि अब्यासके कारण, अस्थिरताके कारण अंदर स्वरूपमें नही रहा ज सकता इसलिये उपयोग बाहर आता है परंतु रसके बिना-सब निःसार, छिलकोंके समान, रस-कस शून्य हो जैसा भावसे-बाहर जके हैं. ३२.

३२. 'सम्यग्दृष्टिको आत्माके सिवा बाहर कहीं अरु नही लगता,...' आत्मा अतीन्द्रिय आनंदमय, अतीन्द्रिय शांतमय, शांतरस स्वभाव जैसे स्वरूपका जिसको अनुभव हुआ, उसको सम्यग्दृष्टि कलते हैं. अंतरमें रागसे भिन्न, पुण्यसे भिन्न अपनी दृष्टि त्रिकावी ज्ञायक पर हो, उसको यहां अनुभवमें आत्माका स्वाद आता है. उसको यहां सम्यग्दृष्टि कलते हैं. आला..ला..! क्योंकि अनंत कालसे राग और द्वेषकी आकूलताका वेदन किया है. अनंत-अनंत कालमें मनुष्य द्विगंबर साधु हुआ तो भी रागकी आकूलताका वेदन किया है. रागसे भिन्न अनाकूल प्रभु, उसकी उसको जबर नही है. सम्यग्दृष्टि (अर्थात्) सत्य जैसी वस्तु परमपारिणामिक स्वभाव अतीन्द्रिय आनंद उसका सम्यक् यानी है, जैसी (वस्तु) है जैसी दृष्टि, जैसा अनुभव (हुआ है). आला..ला..!

जैसे सम्यग्दृष्टिको आत्माके सिवा. अपने अतीन्द्रिय आनंदके स्वादके आगे, 'आत्माके सिवा बाहर कहीं अरु नही लगता,...' बाहर कुछ अरु नही लगता. आला..! जहां अपना स्वरूप... ३१वीं गाथामें कला है, 'जो इंदिये जिगित्ता' अर्थात् द्रव्येन्द्रिय-यह जड, भावेन्द्रिय-अंदर अक-अकको विषय करनेवाली इन्द्रिय और पूरी दुनिया. उसमें भगवान और भगवानकी वाणी भी आ गई. सब इन्द्रिय है. 'जो इंदिये जिगित्ता णाणसहावाधियं मुणदि आदं'. दुनियासे भिन्न होकर. अपना ज्ञानस्वभाव, आनंदस्वभाव सबसे भिन्न. 'णाणसहावाधियं' अधिक. भगवान तीर्थकरदेवकी ओर लक्ष्य करनेसे भी भगवान ज्ञानस्वभाव अधिक आनंदस्वभाव (है).

क्योंकि परद्रव्यमें लक्ष्य करनेसे तो राग होता है. आला..ला..! अपनी चीजमें आनंद भरा है. उस ओरके जुकावसे, उसकी मिठासमें आत्माके सिवा बाहर कहीं अच्छा नहीं लगता.

समकित्तीको चक्रवर्तीका राज है, अंतरमें अच्छा नहीं लगता. ईन्द्रका ईन्द्रासन है. शकेन्द्रको बत्तीस लाख विमान है. शकेन्द्र अेकावतारी है, अेक भव करके मोक्ष जानेवाला है. डोडा अप्सराअें हैं. रस नहीं है, आत्माके सिवा रस नहीं है. आला..ला..! अतीन्द्रिय आनंदका नाथ सख्यिदानंद प्रभु अंतरमेंसे जगृत हुआ और उसका स्वाद आया और उसमें ऋद्धि-संपदा, जगतकी विपदासे विद्धि संपदा-आनंदकी संपदा आत्मामें भरी है. आला..ला..! उसकी जिसको लगनी लगी उसे बाहर कहीं अच्छा नहीं लगता. बाहर कहीं अच्छा नहीं (लगता). आला..! शुभराग भी जहां अच्छा नहीं लगता. क्योंकि वह भी आकूलता है. आनंद और अनाकूल आत्माके आगे राग, तीर्थकर गोत्र बांधनेका राग भी आकूलता-दुःख है. इसलिये कहीं अच्छा नहीं लगता. आला..ला..!

‘जगतकी कोई वस्तु सुंदर नहीं लगती.’ आत्माके आगे ‘जगतकी कोई वस्तु सुंदर नहीं लगती.’ स्वर्ग सर्वार्थसिद्धका देव.

रजकण के ऋद्धि वैमानिक देवनी,

सर्वे मान्या पुद्गल अेक स्वभाव जे.

अेक रजकणसे लेकर सर्वार्थसिद्धके देवकी गति. ‘रजकण के ऋद्धि वैमानिक देवनी, सर्वे मान्या पुद्गल अेक स्वभाव जे.’ सब पुद्गलका स्वभाव है. रजकण या सर्वार्थसिद्धका अवतार. आला..ला..! यह श्रीमद्का वाक्य है. वह कुछ सुंदर नहीं लगता.

‘जिसे चैतन्यकी महिमा अेवं रस लगा है...’ आला..ला..! जिसको चैतन्य भगवान अतीन्द्रिय आनंदका रस लगा है.. आला..ला..! ‘उसको बाह्य विषयोका रस टूट गया है,....’ अेक म्यानमें दो तलवार नहीं रह सकती. जिसको आत्माके सिवा रागादि, पुण्य आदिमें रस है, उसको आत्माका रस नहीं है. और जिसको आत्माका रस है, उसको पुण्यादि परिणाम और उसके इलकी भी ईच्छा नहीं है. रुचि नहीं है, रस नहीं है. आला..ला..! गजब बात है! अेक ओर आत्मा और अेक ओर पूरी दुनिया. लेकिन उस आत्माके रसके आगे पूरी दुनियामें कुछ अधिकता मालूम नहीं पडती. ‘गाणसहावाधियं मुणदि’ ३१ गाथामें कला. वहां तो भगवानकी वाणी और भगवानको ईन्द्रिय कला है. ३१ गाथा. तीन लोकके नाथ और उनकी

वाणी भी परद्रव्य है. आला..ला..! अपने स्वद्रव्यके आनंदके आगे उसको परद्रव्यमें कहीं रस नहीं आता. आला..!

‘जिसे चैतन्यकी महिमा अवं रस लगा है उसको बाह्य विषयोंका रस टूट जाता है.’ ओलो..लो..! यकवर्ती क्षायिक समकृति है. ८६ एगार स्त्रियां थी, उसका भोग भी था. लेकिन अंतरमेंसे उसका रस नहीं था. आला..ला..! स्वामीत्व नहीं, रस नहीं. अंतरकी रुचिका रस निकल गया. क्यों? कि रुचि अनुयायी वीर्य. जिसकी अंतर रुचि हो उस ओर वीर्य जुके. समझमें आया? रुचि अनुयायी वीर्य. जिस ओर रुचि हो उस ओर वीर्य अर्थात् पुरुषार्थ जुके. रुचि अनुयायी वीर्य. जिसकी अंदरमें जड़रत भासित लुई, दुनियाकी कोई चीज, अक भगवान आत्माके सिवा, उसकी जड़रत महसूस लुई, उसका वीर्य अंदरमें जुके बिना रहे नहीं. आला..ला..! वह यहां कहते हैं. ‘बाह्य विषयोंका रस टूट गया है, कोई पदार्थ सुंदर या अच्छा नहीं लगता.’ ओलो..लो..! सर्वार्थसिद्धका देव हो, वह भी सुंदर नहीं लगता. आला..ला..! भगवान आनंदके आगे, सम्यग्दर्शन कोई ऐसी चीज है, प्रभु!.. आला..ला..! जिसको अंदरमें वेदन प्रगट हो, अतीन्द्रिय आनंदका वेदन हो, उस वेदनके आगे सारी दुनिया तुच्छ लगे. आला..ला..! अच्छा नहीं लगता.

‘अनादि अब्यासके कारण,...’ अब क्या कहते हैं? उसको राग तो होता है. समकृतिको आसक्ति तो होती है. तो कहते हैं, ‘अनादि अब्यासके कारण, अस्थिरताके कारण अंदर स्वप्नमें नहीं रहा जा सकता...’ स्वप्नमें रह सकता नहीं. आला..ला..! अंतर आनंदमें जब रह नहीं सके, अपनी पर्यायिकी कमजोरीसे, तब ‘उपयोग बाहर आता है...’ समकृतीका उपयोग बाहर आता है. आला..ला..! बाहुबलीज और भरत, दोनों भाई और समकृती (हैं). लडाई (लुई). वह अस्थिरताका भाग है, भाई! बाहरसे नाप करने जायेगा तो भेद नहीं जायेगा. अस्थिरताका भाग है. अंतर सम्यग्दर्शन-दृष्टि द्रव्य पर पडी है. दृष्टिने द्रव्यका स्वीकार किया है, उसके आगे किसी भी चीजका स्वीकार होता नहीं. आला..ला..!

वह यहां कहते हैं. लेकिन कमजोरीसे, जबतक वीतरागता न हो, तबतक आसक्ति आती है. इसलिये ‘उपयोग बाहर आता है परंतु रसके बिना...’ आला..ला..! अक आदमी था. उसे ऐसी आदत हो गई थी कि रोज उसे हलवा जानेमें चालिये. रोज हलवा जाये. रोटी आदि बिलकूल नहीं. उसका अक ही लडाका था वह भर गया. जलाने गये. जलाकर वापस आते हैं. रोटी करो. रिश्तेदार ढकठे होते हैं. अभी जामनगरमें बना. जामनगर. रोटी करो. भाई! आपको रोटी हजम नहीं होगी.

આપકો હલવા ખાના હો તુમકો રોટી ... ક્યોંકિ ઉસને હલવા હી (ખાયા થા). હલવાકી ખુરાક. રિશ્તેદારને હલવા બનાયા. ઈસને ઐસા કહા કિ, રોટી બનાઓ, બાપૂ! અરે..! લડકા ગયા. બનાયા. થાલીમં ડાલા, લેકિન આંખમંસે આંસુકી ધારા ચલતી હૈ ઓર હલવા ખાતા હૈ. સમજમં આયા? વિસાશ્રીમાળી. જામનગરકા કોઈ જાનતા હૈ? કોઈ જામનગરકા નહીં હૈ? વસા.. વસા. આહાહા..! બરસોંસે સિઈ હલવા હી ખાયા થા. ઉસે હલવા દિયા. રોટી આદિ કુછ ખાયે તો તુરંત રોગ હો જાય, મર જાય. વહ ખાને બૈઠા, લેકિન ખાતે વક્ત આંખમંસે આંસુકી ધારા (બહતી હૈ), રસ નહીં હૈ.

વૈસે સમકિતીકો... આહા..હા..! બાહરકી કોઈ ચીજકા રસ નહીં હૈ. જૈસે એક પુત્ર મર ગયા ઓર અપના ખુરાક હી હલવા થા, લેકિન ઉસે ખાતે વક્ત આંખમંસે આંસુ.. આંસુ.. આંસુ. ઐસે સમકિતીકો ઉપયોગ બાહર આતા હૈ, અંતરમં જા સકતા નહીં. દષ્ટિ ધ્રુવ પર પડી હૈ. ધ્રુવકા અવલંબન અંદરસે લિયા હૈ, વહાં આનંદ હૈ. લેકિન વિશેષ ઉપયોગ અંદર નહીં જાતા હૈ, ઉપયોગ બાહર રહતા હૈ, તબ.. વહ કહતે હૈં?

‘ઉપયોગ બાહર આતા હૈ પરંતુ રસકે બિના...’ રસ નહીં હૈ, રસ નહીં હૈ. રસ ઉડ ગયા. આહા..હા..! એક વૃદ્ધ આદમી થા. હલવા ખાયા. પુત્રકો જલાકર આયે. રિશ્તેદાર ઈકઠે હોકર કહતે હૈં, ભાઈ! તુમ મર જાઓગે, યહ રોટી ખાઓગે તો. આપને કભી ખાયા નહીં. વૈસે યહાં સમકિતીકો આત્માકા ભોજન મિલા... આહા..હા..! સમ્યજ્ઠિકો આત્માકે અનંદકા ભોજન મિલા, ઉસકે આગે દૂસરી ચીજકા રસ છૂટ જાતા હૈ. આહાહા..! ઐસી ચીજ હૈ, પ્રભુ! આહા..! પ્રભુકી પ્રભુતા જહાં અંદરમં ભાસિત હુઈ.. ભગવાન પ્રભુ હૈ, વહ પ્રભુતા જહાં અંતરમં ભાસિત હુઈ, વહાં આત્માકે રસકે આગે, ઉસકે સિવા જગતકા સબ રસ છૂટ જાતા હૈ. આહા..! ધર્મ કોઈ ઐસી ચીજ નહીં કિ બાહરસે છોડ દિયા ઈસલિયે ધર્મ હો ગયા. આહા..હા..! અંદરસે પુણ્યકા રાગ આતા હૈ ઉસકા ભી જિસકો રસ નહીં. આહા..! ઐસી બાત હૈ, પ્રભુ! મૂલ બાત યહ હૈ. આહા..હા..! પુણ્યકા ભાવ આયે, ફિર ભી ઉસમં રસ નહીં હૈ. પુણ્યસે ભિન્ન ભગવાન આત્માકા રસ છૂટતા નહીં. દષ્ટિકા ધ્યેય ધ્રુવ હૈ, દષ્ટિ ધ્રુવ પર જમ ગઈ હૈ. આહા..હા..! કરનેલાયક હો તો યહ હૈ. દષ્ટિ ધ્રુવ પર જમ ગઈ. આહાહા..! ઉસકે રસકે આગે બાકી સબ રસ ફિક્કા લગતા હૈ. કૈસે? ક્યા?

‘સબ નિ:સાર, છિલકોંકે સમાન,...’ છિલકા-છિલકા-ફોતરા. આહા..હા..! ભાઈ! શબ્દોંકા કામ નહીં હૈ, વહાં વિદ્રતાકા કામ નહીં હૈ, વહાં પંડિતાઈકા કામ નહીં હૈ.

आला..ला..! जहां आत्माका रस आया, वहां छिलकेके समान (लगता है). पूरी दुनिया, चक्रवर्तीका राज या ईन्द्रका ईन्द्रासन आत्माके रसके आगे छिलकेके समान सब लगता है. आला..ला..! है?

‘रस-कस शून्य हो जैसे...’ सब परमेंसे रस और कस उड गया. जैसे जाली बकसा हो, दिजे. कोठा भले दिजे. पूरा कोठा जाये. हमने तो प्रत्यक्ष देखा है. हमारे वहां उमरावामें कोठा बहुत (होता था). हाथी आये. वह पूरा कोठा जाय और पूरा निकले. जाये पूरा, पूरा निकले. अंदरसे रस उड गया है. ना जाने कैसे बनता है. उपरका दिभाव उतनाका उतना. और अंदरका रस सब उड गया हो. प्रत्यक्ष देखा है. आला..ला..! समझमें आया? नहीं आया? कोठा नहीं समझे? हाथी कोठा जाता है. उसका भजन भी है. हाथी कोठा जाता है, ईतना गोव होता है. लेकिन वैसाका वैसा पूरा निकले. अंदरका जो रस था वह सब जवास हो गया. हमने तो प्रत्यक्ष देखा है. हमारे वहां उमरावामें हाथी बहुत आते थे. नदीमें बैठे हो. देखा था. जाली होता है. दस-बीस कोठा होता है. अंदरका रस उड गया. तोव उड गया, तोव. तोवको क्या कलते हैं? वजन. वजन उड गया अंदरसे और कोठा बच गया. आला..ला..!

जैसे समकितिको.. आला..! कोठामेंसे जैसे रस ले लिया और जाली कोठा रहा... यह तो प्रत्यक्ष देखा है उसकी बात है, प्रभु! कोठाका बडा वृक्ष होता है. उमरावामें (थे). आला..ला..! इस आत्माके आनंदके रसके आगे, जैसे कोठाका रस पूरा रूस लेता है, फिर भी दिभाव पूरा लगता है, जैसे समकितिकी पुरुष संसारमें दिभाई दे. समकितिकी ईन्द्रके ईन्द्रासनमें दिभाई दे, समकितिकी चक्रवर्तीके राजमें दिभाई दे, ८६ हजार स्त्रीके विषयके भोगमें दिभाई दे, फिर भी उसका उसमें रस नहीं है. आला..ला..! बापू! वह क्या चीज है? मूल चीज तो यह है, बाकी सब बातें हैं.

आत्मा अंदर सखिदानंद स्वरूप, उसका जिसको ज्ञान और आनंदका स्वाद आया, वह छिलका समान सारी दुनिया लगती है. आला..ला..! ‘छिलकेके समान, रस-कस...’ रस और कस. अंदर कस है वह जत्म हो जाता है. ‘जैसे भावसे-बाहर जडे हैं.’ आला..ला..! मूल वस्तुसे दूर नहीं है, लेकिन दृष्टि तो वहीं लगी है. लेकिन बाहरमें जैसा उपयोग लगा है तो वहां जडा है जैसा दिजता है, लेकिन अंदरमें नहीं है. आला..ला..! अंदरमें तो रागसे भी भिन्न आत्माका अनुभव तो उस वक्त भले साक्षात् न हो, लेकिन लब्धरूपमें अनुभवमें है. लब्धि तो है. आत्माका भान हुआ, वह चाहे जो भी भोगमें बैठा हो.. आला..ला..! (लब्धमें आत्मानुभव

यावू है).

अक बात असी है, भरतेश वैभव. भरतेश वैभव देभा है न? भरतेश वैभव पुस्तक है. यहां है. सब देभे हैं. यहां एगरो पुस्तक आते हैं. उसमें अक असा विभा है. उसका नाम क्या है? कर्ता कौन? रत्नाकर वार्णा. रत्नाकर वार्णा ने बनाया है. भरतका वैभव. आलाहा..! उसमें असा विभा है कि अंदर आत्माके रसके आगे सब रस ईके हो गते हैं. वल तो ईक, उसमें दृष्टांत दिया है. भरतेश वैभव है. क्या दृष्टांत दिया है? यक्वती समकित्ती बाहर भोगमें आया. ६६ एगार स्त्री है और क्षायिक समकित है. बाहर भोगमें आया उपयोगमें. आलाहा..! तो वल भोगादिमें दिभनेमें आया. परंतु जब वल भोगसे निवृत्त होकर नीचे बैठे तो ध्यानमें निर्विकल्प हो गये. आलाहा..! भरतेश वैभव है, भाई! चंद्रभाई! आपने देभा है? नहीं देभा होगा. अपने यहां है. .. लोशियार है, कोई रत्नाकर है उसने बनाया है. उसके पाठमें असा आता है. (पुस्तक) बनाया इसलिये लार्थिके लोदे पर उसका बृलुस निकावा था. भरतेश वैभव. आलाहा..!

जिसे अक क्षण पहले उपयोग बाहरका था. लेकिन वल रस बिनाका उपयोग था, प्रभु! रस यहां जमा था, यहांसे उपयोग हट गया. लेकिन दूसरी क्षणमें ध्यानमें निर्विकल्प आनंदके स्वादमें आ गये. आलाहा..! त्याग नहीं है किस्कीका. ६६ एगार स्त्री. अंतर्मुहूर्तमें नीचे बैठकर ध्यानमें बैठ गये, यहां निर्विकल्प ध्यान हो गया. ध्याता, ध्यान और ध्येय भूल गये. आलाहा..! रस उड जाता है. वल उरमें कला.

‘जिसे लगी है उसीको लगी है’.. परंतु अधिक भेद नहीं करना. वस्तु परिणामनशील है, फूटस्थ नहीं है; शुभाशुभ परिणाम तो होंगे. उन्हें छोडने जायगा तो शून्य अथवा शुष्क हो जायगा. इसलिये अकदम जल्लबाजु नहीं करना. मुमुक्षुजुप उद्घासके कार्योंमें ली लगता है; साथ ही साथ अंदरसे गहराईमें जटका लगा ही रहता है, संतोष नहीं होता. अली मुजे जे करना है वह बाकी रह जाता है—असा गहरा जटका निरंतर लगा ही रहता है, इसलिये बाहर कहीं उसे संतोष नहीं होता; और अन्दर जायकवस्तु हाथ नहीं आती, इसलिये उलज्जन तो होती है; परंतु र्धर-उधर न जाकर वह उलज्जनमेंसे मार्ग दूढ निकासता है.’ 33.

33. ‘जिसे लगी है उसीको लगी है’. आलाहा..! आत्माकी जिसे लगी है, उसीको लगी है. आलाहा..! ‘परंतु अधिक भेद नहीं करना.’ विशेष भेद नहीं करना,

जबतक नहीं मिले तबतक. आनंदका स्वाद जबतक नहीं आता, अतीन्द्रिय आनंदका स्वाद जबतक नहीं आता. 'परंतु अधिक भेद नहीं करना. वस्तु परिणामनशील है,...' क्या कहते हैं? 'कूटस्थ नहीं है; शुभाशुभ परिणाम तो होंगे.' आह्लाहा..! यह समझित होनेसे पहलवकी बात है. शुभाशुभ परिणाम होंगे, उलझनमें नहीं आना. उससे हटकर आत्माका प्रयोग करना. आह्लाहा..! सूक्ष्म बात है. वस्तु होनेपर भी अधिक भेद नहीं करना. अकदम निर्विकल्प हो जाऊँ, जैसे जल्लबाजसे (काम) नहीं होता. वह तो सहज दशा है. सहज दशा. आह्लाहा..! स्वभाविक दशा जहां उत्पन्न होती है, वहां लठ काम नहीं करती. आह्लाहा..! उतावली नहीं करना, ऐसा कहते हैं. धैर्य रचना, धैर्य. आह्लाहा..!

'वस्तु परिणामनशील है, कूटस्थ नहीं है; शुभाशुभ परिणाम तो होंगे. उन्हें छोड़ने जायगा तो शून्य अथवा शुष्क हो जायगा.' अंतरमें जा सके नहीं और शुभाशुभ छूट जायगा तो शून्य हो जायगा. समझमें आया? अंतरमें जा सके नहीं, अभी समझित हुआ नहीं और शुभाशुभ परिणाम छोड़ने जायगा तो शून्य हो जायगा. आह्लाहा..!

यह तो बलिनकी अनुभव-वाणी है. अंतर अनुभव-अनुभूति आनंदका स्वाद लेते-लेते यह वाणी निकल गई है. आह्लाहा..! आह्लाहा..! शरीर कमजोर है, ईसलिये आते नहीं. दोपहरको कभी-कभी आते हैं. शरीर कमजोर है, अंदरमें आनंद है.

यहां कहते हैं, अपनेमें 'शुभाशुभ परिणाम तो होंगे. उन्हें छोड़ने जायगा...' आत्मानुभव होवे नहीं (और) शुभाशुभ छोड़ने जायगा तो शुष्क हो जायगा. शुभ परिणामको छोड़ने जायगा, शुद्ध अनुभव है नहीं, शुष्क हो जायगा. आह्लाहा..! अथवा शून्य हो जायगा. कुछ पत्ता नहीं लगेगा. यह तो अंतरकी बात है, बापू! अनुभवकी बात है. आह्लाहा..!

अनुभव रत्न चिंतामणि, अनुभव है रसकूप,

अनुभव मार्ग मोक्षनो, अनुभव मोक्षस्वप्न.

आह्लाहा..! अनुभव सूक्ष्म वस्तु है, बापू! 'अनुभवीने अटलुं रे आनंदमां रलेवुं रे...' करीब ८० साल पहले. अभी तो ८१ वर्ष हुआ, शरीरको. ८० साल पहले हमारे पड़ोसमें एक ब्राह्मण थे. मेरे मामाका मकान था. वह स्नान करके ऐसा बोले. लंगोटी पहनते हैं न? तब ऐसा बोले. 'अनुभवीने अटलुं रे आनंदमां रलेवुं रे, लजवा परिब्रह्म ने बीजुं कांई न कलेवुं..' यह समझते नहीं थे. उसे पूछा, मामा! आप क्या बोलते हो? उसने कहा, मैं कुछ समझता नहीं. सब बोलते हैं तो

मैं भी बोलता हूँ. आलाला..! 'अनुभवने अेटवुं रे आनंदमां रहेवुं रे, भजवा परिब्रत..'. आत्मा परब्रत, उसका भजन कर. भक्ति दो प्रकारकी है. समयसारमें जयसेनाचार्यकी टीकामें दो प्रकारकी भक्ति (कही है). एक स्वभक्ति, एक परभक्ति. दो (बात) यही है. स्वभक्ति निर्विकल्प है. विकल्पका अवकाश नहीं है. आलाला..! और परकी भक्ति करने जाता है तो विकल्प आता है. आता है, अंदर स्थिर न रह सके, अस्थिर है. यहां कदा न? अस्थिर है तो आयेगा.

'ईसलिये अेकदम जल्दबाज नहीं करना.' आलाला..! धीरेसे रागसे हटनेका प्रयत्न, धीरेसे करना. बहु जल्दबाज करेगा तो अनुभव प्राप्त होगा नहीं और रागसे दूर होगा नहीं. आलाला..! 'मुमुक्षुव उद्घासके कार्योंमें भी लगता है;...' क्या कहते हैं? मुमुक्षुव बाहरमें उद्घासित दिजे. बाहरके काममें उद्घास जैसा दिजे. आलाला..! ईन्द्र, शकेन्द्र अेक भवमें मोक्ष जानेवाला है. वल नंदिश्वर द्विपमें जाता है. आठ-आठ दिन. वल समकृती है, अेक भवमें मोक्ष जानेवाला है. वल घुंघरु बांधकर नाचता है. आला..! भगवानके पास. अंदरमें समजता है कि वल सब जडकी क्रिया है. थोडा भाव है वल शुभ है. जैसा समजता है. और शुद्ध मेरी चीज दूसरी भिन्न है. आला..ला..!

वल कहते हैं, 'मुमुक्षुव उद्घासके कार्योंमें भी लगता है;...' घुंघरु बांधकर नाचता है, है समकृती, क्षायिक समकृत. आलाला..! मिथ्यादृष्टि अशुभराग छोडकर शुभरागमें लीन हो, फिर भी मिथ्यादृष्टि है. समकृती, समकृतमेंसे उपयोग हट गया, समकृत वैसा ही रहा, उपयोग हटा तो शुभराग भी आया. अशुभराग-कृष्ण, नील, कापोत लेश्या भी आयी, फिर भी उसकी दृष्टि ध्रुव पर है, वल हटती नहीं. आलाला..! समजमें आया? ध्रुवके ध्यानमें जिसे लगी है,.. आलाला..! उसे वल बाहरकी सब चीजका रस छूट गया है. जैसे ही मान ले कि हम धर्मी हैं. और अंदरमें कुछ नहीं. आलाला..! कठिन बात है.

'मुमुक्षुव उद्घासके कार्योंमें भी लगता है;...' समकृती उद्घाससे भक्ति आदि भी करते हैं न? भगवानकी भक्ति आदि करे. शुभभाव आता है तो करते हैं. 'साथ ही साथ अंदरसे गहराईमें षटका लगा ही रहता है,...' अंदर षटक (रहती है कि), अरे..! मैं तो आनंद हूँ, वल नहीं. आलाला..! उस बातकी षटक तो रहा ही करती है. 'संतोष नहीं होता.' बाहरमें कोई चीजमें धर्मीको संतोष होता नहीं. मान, अपमान, ईश्वर, कीर्ति सब धूल है. आलाला..! किसी पर जिसे रस नहीं है. आलाला..!

‘अभी मुझे जो करना है वह बाकी रह जाता है.’ अंदरमें जानेका प्रयत्न करता है, प्रयत्न करते.. करते.. करते... अंदरमें जानेका अंक ही प्रयत्न है, ईसलिये शुभ-अशुभको छोड़नेकी जल्दबाजी भी नहीं करता. क्योंकि अंकम छोड़ने जाये तो शुभ भी छूट जायेगा. अभी शुद्धता प्रगट नहीं हुई. चंद्रमाई! प्रथम भूमिकाके लिये यह बहुत अच्छा है. ‘ऐसा गरुड भटका निरंतर लगा ही रहता है,...’ आला..ला..! कल दृष्टांत दिया था न? मांका. मां-बेटा होता है न. अंगूली पकडकर जाता हो. दृष्टांत दिया था न? लडका हो, उसकी मांकी अंगूली पकडकर चलता हो. उसमें अंगूली छूट गई और अकेला रह गया. उसकी मां आगे चली गयी. उसे पुलीस उठाकर ले आयी. हमने देखा है. पोरबंदर चातुर्मास था. अपासरके पास ही वह हुआ. लडकीको ऐसा पूछते हैं, लडकी! तेरा नाम क्या है? मेरी मां. उसे अंक ही लगी थी, मेरी मां, मेरी मां, मेरी मां. वैसे समकित्तीको मेरा प्रभु, मेरा प्रभु आत्मा लगा है. उसे कुछ भी पूछे, तेरी गली कौन-सी? तेरी सहेली कौन? कुछ कहे तो उसकी गलीमें छोड़ दे. लेकिन अंक ही बात बोले, जो कुछ पूछे, मेरी मां, मेरी मां. जैसे धर्मीको, मेरा नाथ आत्मा. आनंद सख्खिदानंद प्रभु, उस परसे दृष्टि कभी उटती नहीं. बाह्यमें उपयोग आये.. आला..! बाह्य कार्यमें जुडा हो ऐसा दिजे, फिर भी बाहरका काम करता नहीं. समकित्ती बाह्य कोई भी काम, हाथ हिलाना, वह किया आत्माकी नहीं. आला..! हाथ हिलाना, हाथसे पुस्तक बनाना वह आत्माकी किया नहीं. आला..!

वह तो तीसरी गाथामें आ गया न? समयसार तीसरी गाथा. तीसरी गाथामें मूल पाठ है. प्रत्येक वस्तु अपने धर्मको चुंबती है. अपने सिवा दूसरी चीजको चुंबती नहीं. समयसारकी तीसरी गाथा. मूल पाठ संस्कृत अमृतचंद्रायार्थका है. बताया था न? कल बताया था. दो बात है. अंक तो यह कि, अंक द्रव्यकी पर्याय दूसरे द्रव्यकी दूसरी पर्यायको छूती नहीं. यह बात जैनमें बहुत कठिन है. और दूसरी बात-कमबद्ध. आगे-पीछे पर्याय कभी होती नहीं. जिस समय जो होनेवाली है वही होती है. कमबद्ध और यह. अंक द्रव्य दूसरे द्रव्यको छूता नहीं. दो बात बहुत कठिन है, प्रभु! आला..! दो बात अंदरसे बैठे, उसकी दशा पलट जाय. कमबद्धका निर्णय करने जाय.. सर्व द्रव्यमें कमसर पर्याय होगी. आगे-पीछे होगी नहीं. शरीरकी भी ऐसी और आत्माकी भी ऐसी. ऐसा निर्णय करने जाय तब ज्ञायक पर दृष्टि जाती है. और अंक द्रव्य दूसरे द्रव्यको छूता नहीं, ऐसा निर्णय करने जाता है तो भी द्रव्य पर दृष्टि जाती है. आला..! ये दो सिद्धांत बहुत

कठिन है.

कमबद्ध. कोई भी द्रव्यकी पर्याय कमसे अकेके बाद अके जो होनेवाली है वह. अके के बाद दूसरी कोई भी हो, असा नहीं. जो होनेवाली है वही होगी. कमसर धारा चलती है. प्रवचनसारमें दृष्टांत दिया है. ८० गाथा. मावामें जहां भोती होता है, भोती. वह जिस स्थानमें है वही होता है. वहांसे आगे-पीछे करने जाय तो धार टूट जायेगा. आलाहा..! असा आत्मा और सर्व द्रव्यकी धारावाली समयमें जो पर्याय प्रवर्तती है, कमबद्ध-आगेपीछे नहीं और उसका-कमबद्धका निर्णय द्रव्यके आश्रयसे होता है. पर्यायका निर्णय द्रव्यके आश्रयसे होता है. पर्यायके आश्रयसे पर्यायका निर्णय नहीं होता. आलाहा..!

‘गहराईमें भटका लगा ही रहता है.’ धर्मी बाहरमें दिखते हैं, लेकिन अंदरमें आत्माका (भटका) गहराईमें लगा रहता है, वहांसे लटते नहीं. आलाहा..! बाहरमें स्त्री, कुटुंब, परिवार, चक्रवर्तीका राज, ईन्द्रकी ईन्द्राणी, कोडों ईन्द्राणी. (होती हैं). आलाहा..! लेकिन अंदरके आनंदके रसके आगे भटक-भटक, काम करते हैं लेकिन भटक आत्माकी रहा करती है. मैं तो आनंद हूं, मैं तो ज्ञान हूं. मैं रागका कर्ता नहीं हूं और रागका भोक्ता भी नहीं हूं. आलाहा..! मार्ग असा है, प्रभु! अंदरकी प्रभुता अलग है. आलाहा..!

‘अभी मुझे जो करना है वह बाकी रहा जाता है...’ असा विचार करे. अंदरमें अनुभवमें जाना है, उसकी बात है न यहां? ‘असा गहरा भटका निरंतर लगा ही रहता है, ईसलिये बाहर कहीं उसे संतोष नहीं होता;...’ भगवान आत्माके सिवा सम्यग्दृष्टिको बाह्यमें कोई चीजमें संतोष नहीं होता. आलाहा..! भक्ति करे तो भी शुभराग है, पंच मलाप्रत हो तो वह शुभराग है, उसमें रस नहीं है. राग आता है, लेकिन रस नहीं है. आलाहा..! ‘और अंदर ज्ञायकवस्तु लथ नहीं आती,...’ समकित नहीं है तो उसे लथ नहीं आयी और उसे यहां शुभमें उलझन हो जाय. शुभमें उलझनमें आकर छोडने जाय, नहीं छूटे. शुष्क हो जायगा. आलाहा..! ‘ईसलिये उलझन तो होती है;...’ उस ओरका प्रयत्न तो होता है. ‘परंतु ईधर-ईधर न जाकर वह उलझनमेंसे...’ उलझन किसको कलते हैं? उसमेंसे निकल जाय. निकालना है, उसमेंसे मार्ग निकालना है. ३३ हुआ.

मुमुक्षुको प्रथम भूमिकामें थोड़ी उलझन ली होती है, परंतु वह ऐसा नहीं उलझता कि जिससे मूढ़ता हो जाय. उसे सुभका वेदन चाहिये है वह मिलता नहीं और बाहर रहना पोसाता नहीं है, इसलिये उलझन होती है, परंतु उलझनमेंसे वह मार्ग ढूंढ लेता है. जितना पुरुषार्थ उठाये उतना वीर्य अंदर काम करता है. आत्माथी हठ नहीं करता कि मुझे मटपट करना है. स्वभावमें हठ काम नहीं आती. मार्ग सहज है, व्यर्थकी जहदबाजुसे प्राप्त नहीं होता. ३४.

३४. किसीने विभा है. 'मुमुक्षुको प्रथम भूमिकामें थोड़ी उलझन ली होती है,...' कषाय? उलझनका अर्थ क्या है? थोड़ा कषायभाव आता है? अस्थिर स्थिति? अस्थिर स्थिति? 'परंतु वह ऐसा नहीं उलझता कि जिससे मूढ़ता हो जाय.' आला..ला..! अंतरमें आनंदमें जानेको, अभी सम्यग्दृष्टि नहीं है, इसलिये राग आता है, कषाय ली होता है, लेकिन उलझनमें नहीं आना, उलझना नहीं. उलझ जायेगा तो अंदर जा नहीं सकेगा. आलाला..!

'उसे सुभका वेदन चाहिये है...' सर्वको सम्यग्दर्शन प्राप्त करनेका भाव है. 'उसे सुभका वेदन चाहिये है...' आलाला..! अतीन्द्रिय आनंदका वेदन चाहिये. भगवान् आत्मा अतीन्द्रिय आनंदका पुर, सर्वांग नूर-ज्ञानका तेज, जैसे भगवान्का वेदन चाहिये. समकित पहलेली मुमुक्षुको यह लोना चाहिये. आलाला..! इसके सिवा कोई चीज रुये नहीं, सुलाये नहीं. आला..! 'वह मिलता नहीं और बाहर रहना पोसाता नहीं है,...' अंदर अनुभवमें जाता नहीं और बाहरमें आना रुचता नहीं. 'इसलिये उलझन होती है, परंतु उलझनमेंसे वह मार्ग ढूंढ लेता है.' थोड़ी उलझन होती है, उसको छोडकर सूक्ष्म विकल्प आ जाता है, उस सूक्ष्म विकल्पको उलझन कहते हैं, उसमेंसे छूटकर अंदरमें यवा जाता है. समकित प्राप्त करनेकी रीत और क्रम यह है कि जो अनंत कालमें एक समय ली मिला नहीं. आलाला..! 'इसलिये उलझन होती है,...' 'उसे सुभका वेदन चाहिये है वह मिलता नहीं और बाहर रहना पोसाता नहीं है,...' अंदरमें जा सकता नहीं और बाहर आना, अशुभ आदिमें रुचता नहीं. 'इसलिये उलझन होती है, परंतु उलझनमेंसे वह मार्ग ढूंढ लेता है.' विकल्पको छोडकर. उलझनका अर्थ यहां विकल्प है. विकल्प थोड़ा जो रागका अंश है, उसको छोडकर निर्विकल्प आत्माका सम्यग्दर्शन ढूंढ लेता है. आलाला..! बहुत लोग पूछते हैं कि समकित कैसे होता है? कैसे होता है? जैसे होता है.

आलाला..!

‘जितना पुरुषार्थ उठाये उतना वीर्य अंदर काम करता है.’ जितना अंदर पुरुषार्थ करे.. आलाला..! पुरुषार्थ तो उसको कलते हैं, अंतर्मुखमें जितना वीर्य जुके उसको पुरुषार्थ कलते हैं और अंदरमें जुके नहीं और जो शुभ आदि भाव हो, उसको तो क्लिव कलते हैं. संस्कृतमें क्लिव (है). क्लिवका अर्थ जयचंद्र पंडितने किया है कि वह नपुंसक है. जैसा अर्थ किया है. जयचंद्र पंडित है न? उन्होंने जैसा लिखा है. आलाला..!

स्वयंको शुभभावमें रुचता नहीं और अंदर जा सकता नहीं. उसको अंदर विकल्पकी जगहमें घुस जाता है. लेकिन उसे छोड़ देना. अंदरमें भगवान पूर्णानंदका नाथ तत्वमें विराजता है. पर्याय उपर तैरती है, पूरे शरीरमें पर्याय उपर रहती है. यह पेटमें आत्मा है न अंदर? उसके प्रत्येक प्रदेश पर पर्याय है. प्रत्येक प्रदेश पर पर्याय है. सब पर्यायको अंतरमें जुकाना. आलाला..! यह किया है. ‘पुरुषार्थ उठाये उतना वीर्य अंदर काम करता है.’

‘आत्मार्थी लठ नहीं करता...’ आलाला..! लठ नहीं करता. वह आ गया न? उत्सर्ग और अपवाह. उत्सर्ग और अपवाह मार्ग. अंदर रह नहीं सके तो शुभरागमें आता है. लठ नहीं करे कि शुभराग क्यों आया? राग नहीं चाहिये, जैसी लठ नहीं करता. और शुभराग आया, लेकिन उसमें रहनेका भाव न करे. आलाला..! पहले आ गया है, उत्सर्ग और अपवाह. प्रवचनसारकी बात बहिनमें आ गयी है. अंतरमें अनुभव हुआ, उसमें रह न सके तो आग्रह नहीं करना कि मैं ठसीमें रहूं. शुभराग तो आता ही है. वह अपवाह है. अंदरमें रहना वह उत्सर्ग है. अंदरमें रह न सके तो लठ न करना कि अंदर ही रहूं. शुभरागमें आ जायेगा. और शुभरागमें लठ नहीं करना कि शुभराग ही मुझे रचना है. उसकी ली लठ नहीं. आलाला..! सूक्ष्म बात है, भाई!

‘आत्मार्थी लठ नहीं करता कि मुझे जटपट करना है.’ जल्लबाजमें अंदर कषाय होगा अज्ञानीको. अंतर चैतन्यमूर्ति प्रभु अकषाय स्वभाव शांत.. शांत.. शांत.. शांतिके रसका कंड लाथ आया नहीं, ठसलिये कषायकी वृत्ति-विकल्प उठता है. वहां लठ नहीं करना. ‘स्वभावमें लठ काम नहीं आती.’ अंतर स्वभावमें जानेमें लठ काम नहीं करे. आलाला..! अंतरमें जानेके लिये सरलतासे पुरुषार्थ अंतरमें जुकानेका प्रयत्न करना. रागसे हटकर द्रव्य पर (जानेका) पुरुषार्थ करना. उस पर लक्ष्य करनेका प्रयत्न करना. आला..ला..!

‘मार्ग सहज है,...’ आलाला..! मार्ग तो सहज है. कोई रागकी क्रिया या विकल्पकी क्रियासे मार्ग आता है, ऐसा है नहीं. आलाला..! सहज आता है. ‘व्यर्थकी जल्दबाजीसे प्राप्त नहीं होता.’ व्यर्थमें कषाय करे, शुभ और अशुभ, उससे कुछ आता नहीं आता. उ४ हुआ न?

जो प्रथम उपयोगको पलटना चाहता है परंतु अंतरंग रुचिको नहीं पलटता, उसे मार्गका ज्वाल नहीं है. प्रथम रुचिको पलटे तो उपयोग सहज ही पलट जायगा. मार्गकी यथार्थ विधिका यह क्रम है. उ५.

उ६. ‘जो प्रथम उपयोगको पलटना चाहता है...’ आलाला..! ज्ञानन-द्वेषन जो उपयोग परकी ओर जुका है. अनादिसे परकी ओर जुका है. लवे दया, दानमें लो, वह परकी ओर जुका है. उस ‘उपयोगको पलटना चाहता है परंतु अंतरंग रुचिको नहीं पलटता,...’ क्या कहते हैं? रुचिको बढवता नहीं और अंदर प्रयत्न करने जाता है. रुचि आत्माकी चालिये. राग और पुण्यकी रुचि छूट जानी चालिये. किसी भी पहलूसे रागकी पुष्टि और रुचि नहीं लोनी चालिये. सब रागकी रुचि छूट जाय. आलाला..! समजमें आया?

‘अंतरंग रुचिको नहीं पलटता, उसे मार्गका ज्वाल नहीं है. प्रथम रुचिको पलटे...’ रुचि अनुयायी वीर्य. जिस ओर पोसाता लो, उस ओर पुरुषार्थ काम करे. आला..ला..! अंतरकी रुचि जमी तो पुरुषार्थ वहां काम करे, रागकी रुचि जमी तो रागका पुरुषार्थ करे. रुचि अनुसार वीर्य लगता है. ‘उपयोग सहज ही पलट जायगा.’ रुचिको पलटे तो उपयोग सहज ही पलट जायगा. रुचि बढव जाय तो उपयोग सहज अंदर जायेगा. आला..! सूक्ष्म बात है, भाई! ‘मार्गकी यथार्थ विधिका यह क्रम है.’ प्राप्त करनेकी विधिका यह क्रम है. विशेष कहेंगे...

(श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)